संकट ‘लॉक डाउन’ नहीं ‘नागरिक’ को चुनने का है ?

भारतीय रिज़र्व बैंक के पूर्व गवर्नर डी.सुब्बाराव ने पिछले दिनों लिखे अपने एक आलेख में वर्ष 1982 की बहुचर्चित अंग्रेज़ी फ़िल्म ‘Sophie’s Choice’ का ज़िक्र किया था।फ़िल्म विश्वयुद्ध के दौरान यहूदियों पर हुए अत्याचारों का मार्मिक चित्रण करती है।फ़िल्म में पोलैंड की एक यहूदी माँ के हृदय में मातृत्व को लेकर चलने वाले इस द्वंद्व का वर्णन है कि वह अपने दो बच्चों में से किसे तो ‘गैस चेम्बर’ में भेजने की अनुमति दे और किसे ‘लेबर कैम्प‘ में ले जाए जाने की।सुब्बाराव का आलेख इन संदर्भों में है कि सोफ़ी की तरह ही इस कठिन समय में सरकार के समक्ष भी विकल्प चुनने का संकट है कि लोगों की ‘ज़िंदगी’ और ‘रोज़ी-रोटी’ में से पहले किसे बचाए ?मौजूदा संकट को भी एक युद्ध ही बताया गया है।

सुब्बाराव ने सरकार के विकल्प चुनने के संकट को देश की अर्थव्यवस्था के सिलसिले में व्यक्त किया था।पर हम यहां जिस विषय की बात करना चाहते हैं उसमें व्यवस्था के समक्ष विकल्प चुनने का कभी कोई संकट पैदा ही नहीं होता।उसे स्पष्ट पता रहता है कि ऐसी परिस्थितियों में क्या किया जाना ज़्यादा ज़रूरी है।सवाल समय की ज़रूरत के हिसाब से ‘नागरिकों’ को चुनने का था और वह पूर्व की तरह ही इस बार भी बिना सोफ़ी की तरह किसी तनाव का सामना किए पूरा कर लिया गया।

चुनाव इस बात का करना था कि संकट के इस समय में वह चयन उन नागरिकों का करे जो ‘नागरिक’ हैं या उन नागरिकों का जो नागरिक तो हैं पर पहले वालों की तरह के ‘नागरिक’ नहीं हैं।अपनी बात को और ज़्यादा स्पष्ट करने की ज़रूरत हो तो किन नागरिकों का इस समय उनके घरों में बंद रहना ज़रूरी है और वे कौन से नागरिक हैं जिन्हें बीच सड़कों पर शिविरों में क्षमा माँगते हुए देश हित में छोड़ा जा सकता है ?

अब ये दो तरह के नागरिक कौन हैं ,इस मर्तबा ही उनकी ओर ज़्यादा ध्यान क्यों गया और प्रत्येक व्यवस्था में उनकी अलग-अलग तरह की ज़रूरतें क्यों बनी रहती है उसे भी समझना आवश्यक है।

जानकर हैरत हो सकती है कि देश की (वर्ष 2017 तक) 132 करोड़ की आबादी में 122 करोड़ लोगों के पास आधारकार्ड हैं जबकि पासपोर्ट सिर्फ़ छह करोड़ अस्सी लाख लोगों के पास ही हैं।यानी जनसंख्या के कुल 5.15 प्रतिशत के पास।इनमें भी एक ही परिवार के दो से अधिक लोग भी पासपोर्टधारी हो सकते हैं।सही में पूछा जाए तो ये ही वे लोग हैं जो देश और बैंकों को भी चलाते हैं।इन्हीं पासपोर्टधारियों में

कोई पंद्रह लाख लोगों ने 15 जनवरी से 23 मार्च के बीच विदेशों से भारत के हवाई अड्डों पर प्रवेश किया था।हमारे यहाँ जितने लोगों की टेस्टिंग इस समय प्रतिदिन हो रही है उसे देखते हुए क्या उन 65 दिनों के दौरान यह सम्भव रहा होगा कि प्रतिदिन कोई पच्चीस हज़ार लोगों की सघन कोरोना जाँच अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डों पर हो गई होगी ? हवाई यातायात के खुल जाने के बाद कितने और भारतीय स्वदेश लौटेंगे कहा नहीं जा सकता।हो सकता है सरकार को अपनी ओर से विदेशों में अटके कोई 25 हज़ार भारतीय छात्रों/नागरिकों को वापस लाने की व्यवस्था करना पड़े।

ताज़ा मामला कोटा में अध्ययनरत उन छात्रों का है जिन्हें वापस लाने के लिए उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा सैंकड़ों बसें उपलब्ध कराईं गईं।बिहार और झारखंड की सरकारों द्वारा भी अपने छात्रों को लेकर नाराज़गी और चिंता व्यक्त की गई है।ऐसे समय उन 'नागरिकों 'और उनके छोटे-छोटे बच्चों के बारे में कहीं भी कुछ नहीं सोचा जा रहा है जो भूखे-प्यासे अपने अभिभावकों के साथ पैदल ही अपने घरों की ओर निकल पड़े थे पर बीच रास्तों में रोक लिए गए।सरकारों की चिंताओं में बसे 'नागरिकों' से अलग हैं ये 'नागरिक' वे चाहे फिर वे उत्तर प्रदेश के हों, बिहार के हों या झारखंड के।उनके लौटने के लिए कहीं कोई बस नहीं है।

सुब्बाराव से इस सवाल पर टिप्पणी माँगी जा सकती है कि क्या लॉक डाउन उसी 'नागरिक' के लिए है जो घर से भी काम कर सकता है या बिना काम के भी रह सकता है और जिसकी कि संख्या चालीस प्रतिशत है ?और उसे दूसरे 'नागरिक' के लिए तभी खोला जाएगा जब देश की अर्थव्यवस्था उसके बिना चल नहीं पाएगी और जिसकी कि संख्या साठ प्रतिशत है ?और उसके बाद भी वह अपने घर लौट पाएगा कि नहीं यह अभी तय नहीं है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार एवँ राजनीतिक विशेलेषक हैं)